बंगलादेश में चकमाओं को चकमा क्यों ?

हिन्दुस्तान

—शशिधर खां—

28.9.1989

यह बात अब लगभग निश्चित जान पड़ रही है कि बंगलादेश सरकार त्रिपुरा में पड़े ७० हजार चकमा शरणार्थियों को अपने देश में जगह देने को तैयार नहीं है और दिखावे के लिए बातचीत का सिलसिला बीच-बीच में जारी रख कर भारत सरकार तथा चकमा नेताओं को चकमा देने की कोशिश कर रही है।

इतना ही नहीं, चटगांव पहाड़ी क्षेत्र के चकमाबहुल तीनों जिलों (रंगामाटी, खग्राचारी और बंदरबान) में गैरआदिवासियों को उकसा कर चकमा आदिवासियों को तरह-तरह से तंग किया जाता है, यातनाएं दी जाती हैं ताकि उनका भारतीय सीमा की ओर पलायन जारी रहे। बंगलादेश सरकार ने उन इलाकों में तैनात सेना और पुलिस को भी खुली छूट दे रखी है और जब शान्तिवाहिनी छापामार यथाशक्ति बदले की कार्रवाई करते हैं तो उन्हें आतंकवादी करार कर खुद तो उनके साथ बर्बरतापूर्ण सुलूक करती ही है, भारत सरकार से शिकायत करने से भी नहीं चूकती।

'२५ जून को तीन जिला परिषदों का चुनाव कराके बंगलादेश सरकार ने खानापूरी कर ली। न तो चकमा आदिवासियों को कोई प्रतिनिधित्व मिला, न ही उनसे इस सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया गया और उनके प्रतिनिधि चुन लिए गए। चकमा नेताओं ने चुनाव का बहिष्कार किया, क्योंकि उन्होंने चुनाव से पहले सात मई को आदिवासियों पर सेना और पुलिस द्वारा किए गए अत्याचार की न्यायिक जांच कराने की मांग की थी जिसे बंगलादेश सरकार ने अनसुनी कर दी।

चुनाव में भी सरकार ने दुहरी चाल खेली। एक ओर यह दुहाई देती रही कि आदिवासियों के सहयोग के बिना मतदान अधूरा माना जाएगा, क्योंकि खासकर उन्हीं के हित के लिए ये परिषदें बनाई गई हैं, दूसरी ओर इसकी पूरी तैयारी कर ली थी कि चकमा नेताओं द्वारा चुनाव का बहिष्कार और उपद्रव खड़े करने की कोशिशों के बावजूद हर हालत में चुनाव करा ही लिया जाए।

जिला परिषद अध्यक्षों के चुनाव

और वही हुआ भी, रंगामाटी से गौतम दीवान और खग्राचारी से समीरन कुमार निर्विरोध अध्यक्ष चुन लिए गए। बंदरबान जिला परिषद के अध्यक्ष पद के लिए शाचिंगप्रु चुनाव लड़ रहे थे। मारंग आदिवासी समुदाय के शाचिंग का मुकाबला अपने चाचा से ही था। इस चुनाव के बाद से हिंसा पर काबू पा लेने का बंगलादेश सरकार का दावा तो कुछ हद तक सही है लेकिन शान्ति और सुव्यवस्था फिलहाल इन इलाकों से कोसों दूर है। हिंसा कम होने के कारण भी कुछ और हैं। जिला परिषद अध्यक्षों को व्यापक अधिकार दिए जाने से तमाम आदिवासी इलाकों में बौखलाहट है, क्योंकि चकमा आदिवासियों के साथ सख्ती बरतने के लिए ही उन्हें ये अधिकार दिए गए हैं। जिला परिषद् अध्यक्षों को अब कानून की ओर से पूरी छूट है कि वे चाहें तो किसी को बिना कारण बताए और बिना मुकदमा चलाए जेल में डाल दें अथवा आवश्यक समझें तो उपद्रवों के दौरान ही 'शान्ति भंग करनेवालों' का काम तमाम कर दें। खासकर चकमा शरणार्थियों के अधिकारों के लिए पिछले ११ वर्षों से संघर्षरत शांतिवाहिनी छापामारों के खिलाफ की गई किसी भी कार्रवाई की बंगलादेश की किसी भी अदालत में सुनवाई नहीं होगी। बंगलादेश के कानून में इसके लिए विशेष व्यवस्था की गई है। अध्यक्षों को यह भी निर्देश है कि हर हालत में उन्हें अपने को ऐसा दिखाना है कि ताकि आदिवासियों को लगे कि उनके हित के लिए ही सब कुछ किया जा रहा है और सेना तथा पुलिस तो सिर्फ शान्ति बनाए रखने के लिए है।

ऐसे वातावरण में चकमा आदिवासी अपने को सुरक्षित महसूस कैसे करें ? चकमा आदिवासी अपने धर्म, रीति-रिवाज और संस्कृति के मामले में कुछ ज्यादा ही कट्टर हैं। उन्हें अपनी संस्कृति और मान्यताओं से इतना गहरा लगाव है कि वे लूट, आगजनी, हत्या और बलात्कार जैसे अत्याचार भी सहकर चुप रह सकते हैं लेकिन अपने धार्मिक तथा सामाजिक रीति-रिवाज नष्ट करने की कोई कोशिश किसी भी कीमत पर नहीं झेल सकते।

राष्ट्रपति इरशाद की दलील

अपने देश के लिए इस्लाम का ढिंढोरा पीटनेवाले, बंगलादेश के राष्ट्रपति जनरल हुसैन मुहम्मद इरशाद को बौद्ध धर्म के पक्के अनुयायी चकमाओं से इसी बात को लेकर नफरत है और चटगांव पहाड़ी क्षेत्र के आसपास के मुसलमानों में भी इस्लाम के नाम पर उन्होंने नफरत पैदा कर दी है ताकि चकमाओं को सुख-शान्ति से जीने नहीं दिया जाए। इसीलिए वे पृथक राज्य की चकमा आदिवासियों की मांग पर विचार करने को भी तैयार नहीं हैं। इस सम्बन्ध में श्री इरशाद का तर्क है कि बंगलादेश की पूरी आबादी के एक प्रतिशत हिस्से के लिए अलग प्रान्त की मांग बिल्कुल अव्यावहारिक है। इन आदिवासियों को छिन्न-भिन्न करके रखना और गैर-आदिवासियों को इनके खिलाफ भड़काते रहना बंगलादेश सरकार की सुनियोजित साजिश है ताकि ये एकजुट होकर कभी अपने अधिकारों की मांग को लेकर तीव्र संघर्ष करने की स्थिति में न आने पाएं। इसके लिए बंगलादेश की सरकार ने इतने गैर-आदिवासियों को लाकर चकमाबहुल क्षेत्रों में बसा दिया है कि चकमा ही धीरे-धीरे अल्पसंख्यक होते जा रहे हैं और उधर भारत की ओर भागने का सिलसिला भी बन्द नहीं हुआ है और शायद हो भी न पाए क्योंकि निकट भविष्य में कोई व्यवस्था होने की संभावना नहीं दिखाई देती।

चकमा आदिवासी भुखमरी के शिकार नहीं हैं। झूमखेती (फसलें बदल-बदल कर बोना) की वजह से वे सुखी जीवन बिता रहे हैं। उन्हें डर इस बात का है कि चकमा सभ्यता और संस्कृति को नेस्तनाबूद करने पर तुली बंगलादेश सरकार उनका भी अस्तित्व समाप्त कर देगी।

बंगला सैनिकों का हमला

इसलिए सात मई की आधी रात के समय चटगांव पहाड़ी क्षेत्र के मुसलमानों की मदद से बंगलादेशी सैनिकों ने अब लोगांड़ उपजिले के नौ आदिवासी गांवों पर हमला किया तो उसके पीछे उनके बीच भगदड़ मचाकर उनके मठ और धार्मिक सभा स्थलों को नष्ट करना ही मुख्य ध्येय था। पर्वतीय चट्टग्राम जन सहिता की समिति की रिपोर्ट के अनुसार सेना और पुलिस आदिवासियों के घरों में आग लगाकर भागनेवालों को गोलियों से भून रही थी और मुसलमान उनके मठ नष्ट करने पर तुले थे। मौके का फायदा उठाकर उपद्रवियों में आधा दर्जन से भी ज्यादा बौद्ध मठ नष्ट कर दिए और उनका संचालन करनेवाले भिक्षुओं के दो-दो टुकड़े काटकर पेड़ से लटका दिया।

चटगांव की स्वायत्तता की मांग को लेकर आन्दोलन कर रही इस समिति ने पूरी छानबीन करने के बाद अपनी रिपोर्ट 'एमनेस्टी इंटरनेशनल' और तमाम मानवाधिकार संगठनों को भेजी है। ऐसे लोमहर्षक अत्याचार चकमा आदिवासियों ने आज तक अपनी आंखों से नहीं देखे थे।

आततायियों ने ५०० से भी ज्यादा घर जला दिए। उस समय सब अपने-अपने घरों में सो रहे थे, इसलिए कइयों का भागते-भागते भी आधा बदन जल गया। उस दौरान सैनिकों ने भागते लोगों पर धुंआधार गोलियां चलाईं और दर्जनों महिलाओं के साथ बलात्कार किया। लाचार चकमाओं का जत्थादो हजार की तादाद में दक्षिण त्रिपुरा से लगे भारतीय सीमा को पारकर चुका था। उसके बाद भी उनके भारत जाने का क्रम जारी रहा। त्रिपुरा में बसे चकमा शरणार्थियों की संख्या ५० हजार से बढ़कर अब तक ७० हजार हो गई है। ५० हजार तो पहले से शिविरों में रह रहे हैं। भारत सरकार भी उन्हें अपने यहां आने से रोक पाने में असमर्थ है। मानवीयता के नाते उन्हें इस तरह रोते-बिलखते छोड़ देना भी उचित नहीं लगता। लेकिन सवाल है भारत सरकार उन्हें कब तक शरण देगी ? एक तो पहले से ही उनकी वजह से त्रिपुरा सरकार आर्थिक बोझ से परेशान है और वह बढ़ता जा रहा है, क्योंकि पता नहीं अब और कितने आएंगे। यहां की सरकार भी एक सीमा तक ही मदद कर सकती है। आखिरकार नागरिक तो ये बंगलादेश के हैं जो इनकी जिम्मेदारी लेने को तैयार नहीं। वहां की सरकार पहले से त्रिपुरा में पड़े शरणार्थियों को वापस लेने में आनाकानी तो कर ही रही है, बाकी बचे आदिवासियों के साथ भी जानबूझकर ऐसा व्यवहार कर रही है ताकि वे बंगलादेश की जमीन छोड़कर अन्यत्र चले जाएं और वहां की सरकार अपनी जिम्मेदारी दिनानुदिन और कम करती चली जाए। भारत सरकार के साथ मुश्किल है कि चकमाओं को जबर्दस्ती मौत के मुंह में कैसे ढकेल दे ? वे अपनी जमीन जायदाद से भी तो बेदखल कर दिए गए हैं। वापस जाएं तो खाएं क्या और बंगलादेश सरकार उनके प्रति सहानुभूति क्योंकर दिखाने लगी ?

ऐसे वातावरण में चकमा आदिवासी अपने को सुरक्षित महसूस कैसे करें ? चकमा आदिवासी अपने धर्म, रीति-रिवाज और संस्कृति के मामले में कुछ ज्यादा ही कट्टर हैं। उन्हें अपनी संस्कृति और मान्यताओं से इतना गहरा लगाव है कि वे लूट, आगजनी, हत्या और बलात्कार जैसे अत्याचार भी सहकर चुप रह सकते हैं लेकिन अपने धार्मिक तथा सामाजिक रीति-रिवाज नष्ट करने की कोई कोशिश किसी भी कीमत पर नहीं झेल सकते।

द. त्रिपुरा व मिजोरम में चकमा शरणार्थी

दक्षिण त्रिपुरा के शरणार्थी शिविरों में रह रहे चकमाओं की स्थिति तो थोड़ी बेहतर है, क्योंकि उन्हें मेहनत-मजदूरी करके किसी तरह खाने-पहनने को मिल जाता है। उनकी हालत और भी दयनीय है जो यत्र-तत्र जंगलों और पहाड़ों में बिखरे पड़े हैं। मिजोरम के बियावान जंगलों में आज भी सैकड़ों की तादाद में चकमा आदिवासी पशुवत् जिन्दगी जी रहे हैं। भारत की सीमा पार करने के बाद ये त्रिपुरा के साथ-साथ मिजोरम की शरण में भी गए, शायद उन्हें मालूम नहीं था कि मिजो लोग शुरू से चकमा विरोधी रहे हैं। उस बेबसी की हालत में भी चकमाओं को देखकर मिजो लोगों ने उन्हें पशुओं की तरह जंगलों की ओर हांक दिया। अब वे भी धीरे-धीरे त्रिपुरा की शरण में आते जा रहे हैं। उन्हें यह भी पता नहीं है कि उनके भविष्य के सम्बन्ध में भारत और बंगलादेश सरकार कुछ सोच रही है या नहीं। शिविरों में पड़े आदिवासी भी अपने अतीत को याद करके भविष्य को लेकर भारी दुश्चिन्ता में पड़े हैं।

भारत सरकार द्वारा बार-बार याद दिलाए जाने पर ही कभी-कभी बंगलादेश सरकार के कानों पर जूं रेंग जाती है। जिस प्रकार आदिवासियों का आना जारी है, उसी तरह भारत सरकार की पेशकश पर ही सही, बंगलादेश के अधिकारी भी यदा-कदा बातचीत करने के बहाने आकर चकमाओं को झूठी दिलासा देते रहते हैं।

२० मई को चटगांव के डिवीजनल आयुक्त अली हैदर खां के नेतृत्व में बंगलादेश का एक प्रतिनिधिमंडल त्रिपुरा के मुख्य सचिव से मिला। दोनों अधिकारियों में चकमा शरणार्थियों की वापसी के सम्बन्ध में बातचीत हुई और यह भी तय हुआ कि अगले सप्ताह दोनों देशों का प्रतिनिधिमंडल इस मुद्दे पर विस्तृत विचार-विमर्श करेगा। उस हिसाब से २७ मई को बंगलादेश का १६-सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल त्रिपुरा पहुंचा और चकमा शरणार्थी शिविरों का दौरा किया। उस प्रतिनिधिमंडल में १२ आदिवासी नेता चटगांव के डिवीजनल आयुक्त, खग्राचारी के जिला आयुक्त और पहाड़ी क्षेत्र विकास परिषद तथा सेना के एक-एक अधिकारी थे। उनका मुख्य उद्देश्य यह दिखाना था कि कुछ दिन पहले चटगांव में जो कुछ हुआ उससे उन्हें बड़ा सदमा पहुंचा है और वे शरणार्थियों तथा उनके नेताओं से यही मशविरा करने आए हैं कि जल्द-से-जल्द उन्हें आदरपूर्वक स्वदेश में बसाया जाए।

चूंकि उस समय चटगांव की घटना ताजी थी और भारत सरकार की ओर से भी कड़ी बातें कही गई थीं, इसलिए बंगलादेशी अधिकारियों को एक बार औपचारिकता तो पूरी करनी ही थी। उसके आज तीन महीने से ज्यादा हो रहे हैं, बंगलादेश को उनकी कोई चिन्ता नहीं है।

चुनाव ठीकठाक करवाना था, इसलिए २५ जून से एक सप्ताह पहले राष्ट्रपति इरशाद ने शान्तिवाहिनी छापामारों के लिए आम माफी की घोषणा की थी, लेकिन कोई झांकने तक नहीं आया। बल्कि शान्तिवाहिनी का नैतिक बल और भी ऊंचा हो गया जब भूतपूर्व संसद सदस्य उपेन्द्रलाल चकमा विद्रोही गतिविधियों में सक्रिय भूमिका निभाने को तैयार हो गए और चुनाव से ऐसी अरुचि दिखाई कि उपद्रव भी नहीं मचाया। उससे बंगलादेश सरकार का यह भ्रम दूर हो गया कि शान्तिवाहिनी को भारत सैनिक सहायता नहीं दे रहा है।

शान्तिवाहिनी नेता देवाशीष चकमा के हौसले बुलन्द हैं। उनका कहना है कि बंगलादेश सरकार तब तक चटगांव पहाड़ी क्षेत्र को एक स्वायत्त क्षेत्र का दर्जा नहीं देगी, जब तक कि उसे मजबूर न कर दिया जाए। अब तो वे अलग प्रान्त बनाने पर अड़े हैं और शायद तभी चकमा आदिवासी सुख की सांस ले पाएं।